RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष ४ अंक ११ नवम्बर २०१६ बुद्धजी शाका ३४१ विक्रम सवंत २०७६ पृष्ठ संख्या ३२

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

आध्यात्मिक उन्नति के आठ सूत्र

१. नियमित ध्यान २. नियमित स्वाध्याय ३. सात्विक अल्पाहार
४. प्रबल पुरुषार्थ ५. परब्रह्म के प्रति समर्पण एवं गुरुजनों के कथनों के प्रति श्रद्धा
६. शिष्टाचार ७. दृढ़ संकल्प ८. अटूट आत्मविश्वास

स्वत्वाधिकारी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
नकुड रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.
Email : shriprannathgyanpeeth@ gmail.com Youtube: SPJIN Website: www. spjin.org
Twitter : @Raajan Swami Whats App: +917533876060 ;

अनुक्रमणिका

1	सम्पादकीय		1
2	बीतक समीक्षा–3 : आत्मचिन्तन का महत्व	कृष्ण कुमार कालड़ा	3
3	हिन्दू समाज में श्राद्ध व्यवस्था	आचार्य सुभाष	6
4	ब्रह्मसृष्टियों की महिमा	जै किशन निजानन्दी	12
5	'दोपहर का सूरज' की संक्षिप्त भूमिका	अमर लाल सेठी	17
6	श्री राजजी के मुखारविन्द की शोभा	हर किषन लाल जुनेजा	21
7	पूज्य सरकार श्री द्वारा ब्रह्मवाणी के खोले गये रहस्य		24
8	तनावमुक्त जीवन कैसे जियें?	मधुसूदन मल्होत्रा	25
9	कितनी गुणकारी है तुलसी?	एस. पी. आर्य	27

'तारतम मंजरी के पाठकों से निवेदन'

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से 'मासिक प्रकाशित होनेवाली " तारतम मंजरी' " पत्रिका वेवसाईट के साथ साथ व्हाट्सएप, फेसबुक के माध्यम से आप सभी के हाथों तक पहुचाने का प्रयास किया जाता है। अब नयी योजना के अन्तर्गत 'व्हाट्सएप में एक ग्रुप बनाई जायेगी, उस ग्रुप में केवल "तारतम मंजरी" ही प्रत्येक महीने डाली जायेगी'। सभी पाठकों से निवेदन है कि ग्रुप में जुडने के लियें आप 'अपना व्हाट्सएप नम्बर व्यक्तिगत रुप से या ईमेल के माध्यम से पूरा नाम,पता सहित भेजें'।

E-mail: tartammanjari@gmail.com
सम्पर्क सूत्र :–
+91 9725389547 (आचार्य सुभाष जी)
+91 9314193262 (जुनेजा बाबूजी)

सदस्यता शुल्क	
भारत में	विदेश में
वार्षिक 130 रू.	650 रू.
आजीवन 1200 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232
सम्पर्क सूत्र–8650851010

Youtube:SPJIN
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.co

सम्पादकीय

मन्दिरों से आत्म–जागृति नहीं हो सकती

– राजन स्वामी

आजकल हमारे देश में करोड़ों–अरबों रुपयों की लागत से बड़े–बड़े भव्य मंदिर बनाने की होड़ लगी हुई है। हमारा समाज भी इस कार्य में पीछे नहीं है। प्राचीन काल में जहां एक ओर गुरूकुलों ने राम और लक्ष्मण जैसे महापुरुषों को जन्म दिया, वहीं दूसरी ओर तक्षिला जैसे विश्वविद्यालयों ने चाणक्य जैसे महान विद्वान पैदा किये। लेकिन इतिहास साक्षी है कि किसी भी मन्दिर से एक भी महान विद्वान, मनीषी या योगी नहीं निकला। इसका प्रमुख कारण मन्दिरों की भौतिकवादी कार्य–पद्धति है – कौन कितना धन या सोना चढ़ा सकता है, यही महत्त्वपूर्ण है। और यह सारा धन या तो लंगर–भंडारों और शोभायात्राओं पर व्यय होता है या मन्दिरों की साज–सज्जा पर। शेष महन्तों, पुजारियों एवं ट्रस्टियों की सुख–सुविधाओं पर व्यय हो जाता है। सुन्दरसाथ जी, गंभीरता से सोचिए, न तो इससे आत्मा को कुछ मिलना है और न ही परमात्मा प्रसन्न होने वाले हैं। आप ही बताइए कि जिसके एक इशारे पर करोड़ों ब्रह्माडं पल भर में बनकर मिट जाते हैं, उसे छप्पन भोग और सोने के मुकुट की क्या आवश्यकता है। लेकिन हम सब इन्हीं कर्मकाण्डों में लगे हुए हैं। आश्चर्य तो तब होता है जब हम स्वंय को परमधाम की ब्रह्मात्मा मानते हैं जिनके पास ब्रह्मज्ञान है।

हमारे देश में जितने भी बड़े मन्दिर हैं उनमें हर वर्ष इतना चढ़ावा चढ़ाया जाता है जिसे यदि शिक्षा पर खर्च किया जाय तो देश में कोई अनपढ़ नहीं बचे। केवल रामायण और भागवत की कथाएं कराना ही धर्म का प्रमुख उद्देश्य बन गया है।

अतः जब तक हम अपने अतीत की ओर नहीं लौटेंगे, जिसमें वेद–शास्त्रों का पठन–पाठन और तारतम वाणी का प्रचार–प्रसार सम्मिलित हैं, मन्दिरों में चढ़ने वाले चढ़ावे समाज को अकर्मण्य बनाते रहेंगे। आप सोने–चान्दी की ईंटों से मन्दिर बना दीजिए जिसमें हीरे–जवाहरात से जड़ित सिंघासन बना दीजिए परन्तु जब तक आपका हृदय पवित्र नहीं होगा, परमात्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता। याद रखिए, परमात्मा को धन से नहीं खरीदा जा सकता। यदि ऐसा होता तो गरीबों को

तो कभी परमात्मा मिल ही नहीं सकते। परमात्मा के यहां कोई भेद–भाव नहीं होता, उसकी दृष्टि में अमीर–गरीब सभी समान हैं। उसे पाने के लिए प्रेम एवं सर्मपण चाहिए – ल्याओ प्यार करो दीदार। परमात्मा मन्दिरों, मस्जिदों, गुरद्वारों व गिरजाघरों में नहीं मिलता। वह हृदय–मन्दिर में मिलता है और ब्रह्मात्मा का हृदय उसका नाम है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि बहिर्मुखी उपासना पद्धति कभी भी मानव को परमात्मा का साक्षात्कार नहीं करा सकती।

अतः जब तक मन्दिरों को राजमहल की तरह बनाने की प्रवृति बनी रहेगी, उससे न तो समाज का कोई भला हो सकता है और न ही आत्म–जागृति।

प्रस्तुति

कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

(श्री राजन स्वामी जी द्वारा श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा
में वर्ष 2018 में की गई बीतक चर्चा से उद्धृत)

विरह

अपने प्राणवल्लभ की सानिध्यता को प्राप्त करने के लिये जलविहीन मछली की भांति तड़फना, विरह कहलाता है। विरह की नौ अवस्थायें होती हैं : स्वयं के प्रति अवहेलना, विषाद, दीनता, दुःख, स्मृति, चिन्ता, उन्माद, मोह तथा अपने प्रियतम को देखने की तीव्र उत्सुकता। इसी प्रकार, विरह तीन प्रकार का होता है : सात्विक, तामस व राजस। 'सात्विक विरह' प्रथम अवस्था है जिसमें आंसू भी बहते हैं तथा हृदय विरह की पीड़ा से चीत्कार कर रहा होता है, किन्तु धैर्य होता है। इसके विपरीत 'तामस विरह' में न तो आंसू बहते हैं और न ही रोना आता है। मन में केवल एक बात बस जाती है – यदि इस क्षण प्रियतम मेरे सन्मुख नहीं आये तो मैं अपना तन छोड़ दूंगी। इन दोनों के बीच की अवस्था को 'राजस विरह' कहते हैं।

प्रस्तुति

नैन्सी

बीतक समीक्षा - ३

प्रस्तुति एवं प्रलेखन
कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

*'तारतम मंजरी' के सितम्बर 2019 अंक से हमने पूज्य **श्री राजन स्वामी** जी द्वारा वर्ष 2018 में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में की गई बीतक चर्चा पर आधारित लेखों की एक श्रृंखला प्रारभ की है। इसमें प्रत्येक अंक में एक विशेष प्रसंग/घटनाक्रम का संक्षिप्त उल्लेख कर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जायेगा कि यह हमारे लिये क्यों महत्वपूर्ण है तथा इससे हमें क्या शिक्षा लेनी चाहिये। आशा है, पाठकों को यह श्रृंखला रुचिकर व उपयोगी लगेगी। आपके सुझाव सादर आमंत्रित हैं।*

– संपादक

नवतनपुरी की लीला

आत्मचिन्तन का महत्व

श्री देवचन्द्र जी जब भोजनगर से नवतनपुरी पहुंचते हैं, तब उनकी आयु 24 वर्ष थी। यहां वल्लभाचार्य मत का बहुत अधिक प्रभाव था। कट्टरपंथी तथा छूआछूत को मानने वाले इस मत के अनुयायियों से श्री देवचन्द्र जी का सदैव विवाद रहता था। यद्यपि श्री हरिदास जी से दीक्षा लेने के कारण श्री देवचन्द्र जी पर भी इस मत का काफी प्रभाव पड़ा था, परन्तु वे उनका अंधाधुंध अनुसरण न कर अपना प्रत्येक निर्णय विवेकपूर्ण ढंग से लेते थे।

जब श्री देवचन्द्र जी श्यामाजी के मन्दिर में निष्ठाबद्ध होकर कान्हजी भट्ट भागवत कथा सुनने जाने लगे तो वहां भी वल्लभाचार्य मत के अनुयायियों ने उनका विरोध करना प्रारम्भ कर

दिया। श्री देवचन्द्र जी रोजाना भागवत कथा के रूप में आत्मिक आहार ग्रहण करने के पश्चात ही जलपान ग्रहण करते थें। उनकी ऐसी निष्ठा देखकर कान्हजी भट्ट तब तक कथा प्रारम्भ नहीं करते थे जब तक श्री देवचन्द्र जी आ नहीं जाते हो। यदि कभी भट्ट जी कथा प्रारम्भ भी कर देते थे तो श्री देवचन्द्र जी उनके घर जाकर उस छूटी हुई कथा को पुनः सुनाने का आग्रह करते थे। इस कारण वल्लभाचार्य मत के अनुयायियों से उनका द्वेष बढ़ता गया और वे श्री देवचन्द्र जी में कोई न कोई अवगुण ढूंढकर उन्हें नीचा दिखाने का अवसर तलाशते रहते थे।

शीघ्र ही उन्हें यह अवसर मिल भी गया। जैसाकि पूर्व में कहा जा चुका है कि श्री देवचन्द्र जी का नियम था कि वे बिना भागवत कथा रूपी आत्मिक आहार लिये बिना स्वयं भी कुछ नहीं खाते थे। वल्लभाचार्य मत में एकादशी का उपवास रखा जाता है तथा द्वादशी के दिन भण्डारा होता है, जबकि श्री देवचन्द्र इसके बिल्कुल विपरीत एकादशी को भरपेट भोजन करते थे तथा द्वादशी के दिन उपवास रखते थे। ऐसा करने के पीछे उनका मत था कि चूंकि द्वादशी के दिन भागवत कथा नहीं होती थी और उन्हें आत्मिक आहार नहीं मिलता था, अतः वे भी भूखे रहते थे। उनका विचार था कि जब आत्मा को आहार नहीं मिले तो इस नश्वर शरीर को खिलाने से क्या लाभ है?

जब वल्लभाचार्य मत के उनके विरोधियों को यह पता चला कि श्री देवचन्द्र जी एकादशी के दिन तो भरपेट खाते हैं तथा द्वादशी को भण्डारे वाले दिन भूखे रहते हैं तो उन्होंने कान्हजी भट्ट से उनकी शिकायत की। उनके मतानुसार एकादशी के दिन उपवास रखना धार्मिक आचरण है जिसका श्री देवचन्द्र जी बिल्कुल पालन नहीं करते। इस पर कान्हजी भट्ट ने उन्हें कहा कि श्री देवचन्द्र जी जो भी करते हैं, वे विवेकपूर्ण निर्णय लेकर ही करते हैं।

श्री मदभागवत ग्रन्थ परब्रह्म के द्वारा की जाने वाली आनन्द रस से भरपूर प्रेममयी लीला का वर्णन करता है, जिसका श्रवण करने के उपरान्त स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाले एकादशी के उपवास का कोई महत्व नही रह जाता। उल्लेखनीय है कि उस समय तक वाणी का अवतरण प्रारम्भ नहीं हुआ था।

वास्तव में व्रत और उपवास में अन्तर है – व्रत का तात्पर्य है किसी शुभ कार्य के लिये दृढ़ निश्चय करना, जबकि भोजन न करने को उपवास कहते हैं। तीज–चौथ के दिन भी हमें व्रत रखना चाहिये न कि उपवास। उस दिन हमें यह प्रण लेना चाहिये कि श्री प्राणनाथ जी के बताये मार्ग पर चलेंगे कुलजम वाणी को जन–जन तक पहुंचाकर उनकी आत्म–जागृति का मार्ग प्रशस्त करना ही हमारा मूल लक्ष्य होना चाहिये।

बीतक के उक्त घटनाक्रम से हमें यह शिक्षा मिलती है कि श्री देवचन्द्र जी की तरह हमें कोई भी कार्य करने से पूर्व अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिये। हमें रोजाना रात्रि को सोने से पूर्व आत्म–चिंतन करना चाहिये कि आज मैंने मन, वाणी और कर्म से कोई अनुचित कार्य तो नहीं किया और यदि किया है तो भविष्य में उसकी पुनरावर्ती नहीं होगी। वाणी में एक चौपाई आती है – 'एता मता तुमको दिया, सो जानत है तुम दिल; बेसक इल्मे न समझे, तो सहूर करो सब मिल।' अर्थात् महामति जी कहते हैं सुन्दरसाथ को मैंने रास से सिनगार तक का सम्पूर्ण ज्ञान देकर अध्यात्म के चरम लक्ष्य तक पहुंचा दिया है, फिर भी यदि आपको समझ नहीं आता है तो एकान्त में बैठकर आत्म–चिन्तन कीजिये कि इस संशयरहित ज्ञान का हमारे ऊपर कोई प्रभाव क्यों नहीं पड़ रहा है?यदि हम ऐसा करते हैं तो हमारी अन्तरात्मा से ही इसका उत्तर हमें मिल जाएगा। इसके लिये आवश्यकता पढ़ने पर हमें प्रायश्चित स्वरूप अपने शरीर को दंडित भी करना पड़ सकता है। यदि हम ऐसा करते हैं तो हम भविष्य में कोई पाप नहीं करेंगे और उसके दुष्फल से बच जाएंगे। ध्यान रखिये, एकान्त में आत्म–चिन्तन करने वाला सदैव श्रेष्ठ कल्याण को प्राप्त होता है। अतः यदि हम जीवन में आत्म–चिंतन की यह प्रवृत्ति अपनाते हैं तो एक दिन अवश्य ऊंचाई पर पहुंचेंगे।

तम्मना शर्मा

धामधनी श्री राजजी महाराज की कृपा से हमारी लाडली बेटी **तम्मना शर्मा** सुपुत्री श्री लोकनाथ शर्मा एवं कल्पना शर्मा, सुकलाई असाम, सिक्किम यूनिवर्सिटी से अपने कला विभाग में सर्वोच्च अंक हासिल कर प्रथम स्थान प्राप्त किया। दिनांक 03 नवंबर 2019 को हुए पांचवे दीक्षान्त समारोह में उन्हें माननीय महामहिम भारत के राष्ट्रपति श्री राम नाथ कोबिन्द ने स्वर्ण पदक प्रदान किया। आप एक होनहार प्रतिभाशाली युवती होने के साथ अपने उत्कृष्ट प्रदर्शन से अपने गांव ,शहर, संपूर्ण श्री निजानंद समाज तथा देश का गौरव बढ़ाया है। अतः हम सब सुन्दरसाथ के तरफ से आपको बहुत बहुत बधाई और शुभकामनाएं तथा श्री राजजी आपको और मेहर करे यही आशा करते है । प्रेम प्रणामजी।

हिन्दू समाज में श्राद्ध व्यवस्था

आचार्य सुभाष, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।।
यजु० ३२।१४

अर्थात हे ज्ञानस्वरूप (अग्ने) परमात्मा! जिस मेधा नामक धारणावती बुद्धि को देवगण अर्थात् विद्वान लोग प्राप्त हैं और जिसे प्राचीन ऋषि–मुनि प्राप्त थे, आप उस धारणावती बुद्धि से हमें बुद्धिमान कीजिए।

धर्म–अधर्म के विचारने में समर्थो! सत्यशीलो! वेदादि सत्यशास्त्रों को माननेवालो! वर्णाश्रमी धर्म के सहायको! आप लोग थोड़े समय के लिए संसार के संस्कारों को अलग करके सत्य–असत्य विचार करने वाली बुद्धि की कसौटी को हाथ में लेकर अपने नित्य–नैमित्तिक व्यवहारों को जाँचो, और संसार की प्रणाली से जगत्कर्ता की महिमा की स्वाभाविक गुणों के अनुसार खोज करो! विचार करके देखो कि ईश्वर ने कैसे–कैसे उत्तम नियम तुम्हें दुःखों से छुड़ाने के लिए बनाये हैं! कैसी–कैसी उत्तम–उत्तम वस्तुएँ तुम्हें जगद्रूपी शत्रु से बचने के लिए दी हैं! परमात्मा के नियमों पर ध्यान दो! परमात्मा ने जगत् में जब जीव को उत्पन्न किया तो साथ ही उसकी अल्पज्ञता को देखकर माता–पिता के हृदय में प्रीति उत्पन्न कर दी जिससे यह असमर्थ जीव उनकी सहायता पाकर समर्थ हो जाए। ईश्वर की इस पा के बदले जीव परमात्मा की उपासना और वेदरूपी ज्ञान का प्रचार–प्रसार करता है।

संसार के लोग भली–भाँति जानते हैं कि संसार में जो बीज भूमि में डाला जाता है वह बीज थोड़े दिनों के पश्चात् कई गुना होकर मिलता है। जड़ भूमि भी दिये हुए बीज का बदला देती है और बीज के बोने आदि में जो परिश्रम हुआ है उसके प्रतिफल में बोये हुए बीज से कई गुना बीज लौटा देती है। इसी प्रकार समुद्र सूर्य की किरणों को जो जल समर्पण करता है, सूर्य उसके बदले में उसकी पुष्टि वृष्टि द्वारा करता है। जिस पशु का मनुष्य अन्नादि से पालन करता है वह पशु उसकी सेवा करके उसे बदला देता है। जिस कुत्ते को दो दिन

टुकडा डाल दो वह उसके बदले उसके घर की रखवाली करता है। इसी भाँति संसार के जड़–चेतन पदार्थ बदले के नियम से बँधे हुए हैं।

प्यारे पाठको! जब सभी माता–पिता बालक का पालन–पोषण कर उसे असमर्थावस्था से समर्थावस्था में पहुँचा देते हैं, अज्ञान के गर्त से निकालकर ज्ञान के शिखर पर बैठा देते हैं, माता पिता स्वयं लाखों दुःख उठाकर दिन–रात पुत्र को सुख देने का यत्न करते हैं। माता गर्मी के दिनों में जबकि आग बरसती है पुत्र को पंखा डुलाकर सुलाती है। सर्दी के दिनों में जब बालक बिस्तर को गीला करता है तो आप उस गीले स्थान पर लेटती है, पुत्र को अच्छे स्थान पर सुलाती है। यह कैसा सच्चा प्रेम है! गम्भीरता से विचार कीजिए! ईश्वर की माया का कैसा विचित्र चमत्कार है कि पिता अपने जीवन में नाना प्रकार के कष्ट उठाकर जो कमाता है वह बालक के पालन–पोषण और संस्कारों के करने, पढ़ाने, विवाहादि कार्यों में खर्च कर देता है! जो कुछ बचा रहता है उसको भी पुत्र को देकर स्वामी बना देता है। कैसा मोहजाल है कि सारी आयु उसके निमित्त लगा देता है। क्या इसका बदला मनुष्य को नहीं देना चाहिए?जब भूमि आदि जड़ पदार्थ संसार में बदला देते हैं, तो मनुष्य को चेतन होकर क्या बदला नहीं देना चाहिए?जब कुत्ते आदि नीच योनि के जीव तघ्नता नहीं करते तो क्या मनुष्य को यह उचित है कि जिन माता–पिता ने लाखों कष्ट उठाये हैं, यह उनका बदला न दे?

यदि आप विचार करके देखेंगे तो अवश्य कहेंगे कि मनुष्य को अवश्य बदला देना चाहिए। जैसे माता–पिता प्रीतिवश पुत्र का कष्ट मिटाते हैं, पुत्र को भी श्रद्धापूर्वक उसका बदला देना चाहिए। भारतवर्ष के लोग सनातन से वैदिक धर्म को मानते चले आते हैं। यह वैदिक धर्म ईश्वरीय विद्या अर्थात् वेदों के अनुकूल सदा से चला आता है। वेदों में उस बदले का नाम जो पुत्र को माता–पितादि के निमित्त करना चाहिए, पितृश्राद्ध के नाम से कथन किया है। हे आर्यावर्त वासियो! आपके बड़े–बड़े ऋषि–मुनि सनातन से श्राद्ध करते आये हैं, परन्तु भारत में मत–मतान्तरों के कारण परस्पर विरोध फैलने से यह रीति कुछ उलटी हो गई है। अब इस छोटे–से लेख में प्रश्नोत्तर की शैली में पौराणिक और सत्य सनातन वैदिक धर्म के विचार से इसका तत्त्व दिखाने का प्रयास करता हूँ।

एक दिन एक पौराणिक महात्मा एक वैश्य की दूकान पर बैठे स्वामी दयानन्दजी को बुरा भला कहकर वैश्य को समझा रहे थे कि वैदिक धर्मी पितरों का श्राद्ध नहीं करते। मुँह से कहते हैं हम वेद को मानते हैं, परन्तु वेद में लिखे श्राद्ध को कभी नहीं करते। ये नास्तिक हैं, इनका दर्शन करने में पाप है, इत्यादि। उस समय एक वैदिक सैद्धांतिक भी आ गये। उन्होंने ये बातें सुनकर कहा–महाराज! क्यों

झूठ बोलते हो?यदि आपको अपने पक्ष की सत्यता पर भरोसा हो तो शास्त्रार्थ करके निर्णय कर लीजिए। पौराणिक ने कहा–अच्छा शास्त्रार्थ हो ये तुम कुछ पढ़े भी हो?इसके पश्चात् दोनों में प्रश्नोत्तर होने लगे।

वैदिक– कहिये महात्माजी! पितृकर्म नित्य है वा नैमित्तिक?

पौराणिक– यह नित्य कर्म है।

वैदिक–तो महाराज! सबको प्रतिदिन करना चाहिए?

पौराणिक– हाँ, प्रतिदिन करना चाहिए। यदि सम्भव न हो तो वर्ष में १५ दिन पितृ पक्ष के होते हैं, उनमें जिस दिन पितर मरे हों उस दिन कर ले।

वैदिक– महाराज! जिसके पितर जीते हों वह किस दिन करे?

पौराणिक– उसे करने का अधिकार नहीं, वह न करे।

वैदिक– तो महाराज! मनुष्य के लिए जो पञ्चयज्ञ (मनुस्मृति में कहा गया है–अध्यापनं ब्रह्मायज्ञः पितृयज्ञस्तु तर्पणम्। होमो दैवो बलिभौंतो नृयज्ञोतिथि पूजनम्।। यानी पंच महायज्ञों में वेद पढ़ना–ब्रह्मा यज्ञ, तर्पण–पितृ यज्ञ, हवन–देव यज्ञ, पंचबलि भूत यज्ञ और अतिथियों का पूजन सत्कार अतिथि यज्ञ कहा जाता है।) करना नित्यकर्म में लिखा है, वह उसे न करे?

पौराणिक– अन्य यज्ञ तो कर ले, परन्तु पितृयज्ञ उसके पितादि कर लेंगे।

वैदिक– तो महाराज! शेष चार यज्ञ भी वही कर लेंगे।

पौराणिक– नहीं, शेष अवश्य करने चाहिएँ।

वैदिक– महाराज! जब एकांश छोड़ने में दोष न होगा तो सर्वांश छोड़ने में भी दोष नहीं होगा?

पौराणिक– सन्ध्यादि कर्म कर ले, शेष माता–पिता ने कर लिये?

वैदिक– तो क्या पुत्र के किये हुए कर्मों का फल पिता को और पिता के किये कर्मों का फल पुत्र को मिल सकता है?

पौराणिक– हाँ भाई! होता है, तभी तो संसार करता है।

वैदिक– क्या महाराज! पितरों का मरे पर श्राद्ध हो, जीते जी नहीं?

पौराणिक– हाँ भाई! मरे हुए पितरों का श्राद्ध होना चाहिए, क्योंकि जीते जी तो वे स्वयं खा–पी लेते हैं। जब मरने के पश्चात् पितृलोक में उन्हें भूख लगती है तो पुत्र का दिया अन्न उन्हें मिल जाता

है। इस कारण उनके मरने के पश्चात् ब्राह्मणों को खिलाइए।

वैदिक– महाराज! सब लोग मरकर पितृलोक को जाते हैं। चाहे वे धर्मात्मा हों वा पापी, सब एक स्थल में जाएँ, यह अन्याय है! और आप यह बताएँ कि पितृलोक में पितर कब तक रहते हैं?

पौराणिक– इसका काल तो ठीक ज्ञात नहीं। पण्डितों से सुनते हैं सैकड़ों वर्षों तक रहते हैं।

वैदिक– आपको ज्ञान नहीं कि वे कब तक रहेंगे तो आप उनको बिना जाने सामग्री क्यों भेजते हैं?

पौराणिक– इसमें कुछ हानि नहीं, जब तक पितृलोग वहाँ रहेंगे तब तक पहुँचेगा, पश्चात् हमारा पुण्य होगा।

वैदिक– पया बताइए, क्या मृतकों के साथ जीवितों का सम्बन्ध बना रहता है?

पौराणिक– हाँ, सम्बन्ध बना रहता है।

वैदिक– तो मरने के दिन तिनका तोड़कर ऐसा क्यों कहते हैं कि जिसने किया उसको मिले, या जैसा करता है वैसा फल पाता है।

पौराणिक– यह संसार का व्यवहार है।

वैदिक– महाराज! पिता–पुत्र का सम्बन्ध जीव में रहता है या शरीर में? या जीव और शरीर विशिष्ट में?

पौराणिक– जीव और शरीर–विशिष्ट में।

वैदिक– जब जीव और शरीर–विशिष्ट में पिता–पुत्र का सम्बन्ध रहता है तो जब शरीर नष्ट हो गया, जीव अलग हो गया, उस समय सम्बन्ध तो न रहा। जब सम्बन्ध न रहा तो उसका नाम पितृश्राद्ध कैसे होगा?

पौराणिक– क्या जो श्राद्ध वेदों में लिखा है, वह झूठ हो सकता है?

वैदिक– क्या वेदों में मरे हुए पितरों का श्राद्ध लिखा है?

पौराणिक– क्या जीवित का भी श्राद्ध होता है?

वैदिक– श्राद्ध तो जीवित का ही होता है और जीवित का ही सम्बन्ध है।

पौराणिक– इसका क्या प्रमाण है?

वैदिक– इसमें ईश्वर का सृष्टि–नियम और आपके तीन पीढ़ी के पितरों का श्राद्ध करना ही प्रमाण है।

पौराणिक–इसमें ईश्वर का सृष्टि–नियम किस प्रकार से प्रमाण है?

वैदिक–देखो! बालपन में जब पुत्र असमर्थ था तब माता–पिता ने पाला, रक्षा की। इसी प्रकार जब वृद्धावस्था में माता–पिता असमर्थ होते हैं, तब पुत्र

अपने धर्म के अनुसार श्रद्धापूर्वक उनकी सेवा करे।

पौराणिक– क्या पितरों की श्रद्धापूर्वक सेवा करने का नाम पितरों का श्राद्ध है और वह जीवित पुरुषों का होना चाहिए, इसमें क्या प्रमाण है?

वैदिक– तुम्हारा तीन पीढ़ी के पितरों का श्राद्ध करना, औरों का न करना।

पौराणिक– इससे क्या जीवित पितरों का श्राद्ध सिद्ध होता है?

वैदिक– हाँ! ठीक–ठीक यह हमारे पक्ष को सिद्ध करता है।

पौराणिक– किस प्रकार करता है?युक्तिपूर्वक तो बताईये।

वैदिक– देखिये! वेदों में मनुष्य की आयु सौ वर्ष की लिखी है और न्यून–से–न्यून पच्चीस की अवस्था में विवाह करना लिखा है, तो कम–से–कम २६ वर्ष में पुत्र और ५२ में पौत्र तथा ७८ मे प्रपौत्र हो सकता है। अब जब तक इसके पुत्र हों, तब तक उसका प्रपितामह अर्थात् परदादा मर गया। इसका परपोता अपने पिता, पितामह और प्रपितामह तीन पीढ़ी तक की श्रद्धापूर्वक सेवा कर सकता है और इससे पञ्चमहायज्ञ, जो कि नित्यकर्म हैं कर सकते हैं। इससे भी ज्ञात होता है कि एक पुरुष कितने समय तक अपने पितरों की सेवा कर सकता है। इसमें पितृलोक में जो पापी और पुण्यात्माओं के एक–साथ रहने से ईश्वर के न्याय में दोष आता है, वह भी न रहेगा।

पौराणिक– आपकी इन बातों से तो गरुडपुराण झूठा प्रतीत होता है। क्या व्यासजी का बनाया झूठा हो सकता है?

वैदिक– आपके गरुड पुराण का मिथ्या होना तो उसकी बातों से स्वयं सिद्ध ही है और ष्णजी की बनाई गीता और गौतम ऋषि के बनाये न्यायदर्शन के देखने से यह सर्वथा मिथ्या प्रतीत होता है।

पौराणिक– कैसे मिथ्या है?स्पष्ट समझाये!

वैदिक– सुनिये! आपके गरुड़ पुराण में लिखा है कि जब जीव मरता है तब यम के दूत उसे लेने आते हैं और फिर लिखा है वैतरणी नदी के किनारे तक पहुँचाते हैं। जिसके पुत्र वैतरणी पार कराने को गोदान कर देते हैं वह पार जाता है, नहीं तो नदी में डूब जाता है। भला, यदि कोई पूछे महाराज! क्या यम के दूत निकम्मे हैं?जिसे यमद्वार में ले–जाने के लिए वे आये थे, वह नदी में डूब जाए तो फिर यम के दूत क्यों आये थे?जो वह यहाँ नदी में डूब जाए तो यम के दूतों के साथ कौन यमलोक जाए? वैतरणी में डूबकर कहाँ जाना होगा? क्योंकि जीव तो नित्य है और नदी आदि में शरीर डूबता है तो यहाँ फेंक दिया जाता है। हमारे बहुत–से भोले भाई यह कह देंगे कि दशगात्र करने से दश रोज में शरीर तैयार हो जाएगा, परन्तु दश रोज तक जीव

कहाँ रहेगा?जो लोग वन में मृत्यु पाते हैं, जिनका दशगात्रादि कभी कुछ नहीं हुआ, वे कहाँ जाएंगे? हमारे पौराणिक भाई कहेंगे कि वे प्रेत बन जाएँगे। उनसे प्रेतभाव पूछा जाए तो वे योनि बता देंगे, परन्तु गौतम ऋषि के सूत्र

पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभावः। –न्यायदर्शन १।१९

से यह सिद्ध होता है कि प्रेत्यभाव पुनर्जन्म का नाम है। इस सूत्र के व्याख्यान में इस बात का वात्स्यायन मुनि ने अच्छी प्रकार से निर्णय कर दिया है और ष्णजी भी गीता में लिखते है

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽ पराणि।।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।। गीता २।२२

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोड़कर नये वस्त्रों को ग्रहण करता है, इसी प्रकार जीवात्मा पुराने शरीर को छोड़कर नये शरीर को धारण करता है।

अतः आप जीवित माता–पिता का सत्कार और उनकी सेवा कीजिए, धर्म के सिवाय और सब पदार्थ देकर भी उनका मान कीजिए। जहाँ तक बन पड़े उनकी आज्ञा का पालन करो, कभी भी उनका अनादर न करे, इसी में तुम्हारा कल्याण है। यही मनुष्य जीवन का फल है।

लेखकों के लिए आवश्यक सूचना

सुन्दरसाथ के चरणों में विनम्र प्रार्थना है कि जो भी सुन्दरसाथ लिखने में कुशल,योग्य है। जो अपना भाव तारतम वाणी और शास्त्रों के माध्यम से दूसरों तक पहुंचाना चाहते हैं ऐसे सुन्दरसाथ अपना लेख ईमेल (E-mail) या वटसप (watsapp) के माध्यम से ज्ञानपीठ में भेजें। लेख भेजने की अन्तिम तीथि प्रत्येक महिने की 1 तारिख तक रहेगी। समय पर भेजे गये लेखों को ही उस महिने की पत्रिका में प्रकाशित किया जायेगा।अन्यथा आगे आनेवाली महिनों में प्रकाशित की जायेगी।

लेख भेजने का नियम–
1–शुद्ध टाईप होनी चाहिए।
2–हस्तलिखित शुद्ध एवं स्पष्ट होना चाहिए।
3–टाईप किया गया लेख हो तो ओरजिनल कांपी होनी चाहिए।
4–डाक से ज्ञानपीठ के पते भर भेज सकते हैं।
5–हस्तलिखित लेख को PDF बनाकर ही भेजें, ताकि पढने में और टाईपिंग में असुविधा न हो।

तारतम मंजरी मासिक पत्रिका "लेख" प्रेषित हेतु एवं अन्य कोई भी असुविधा के लियें निम्नलिखित EMAIL और दूरभाष नम्बरों पर सम्पर्क करें।

tartammanjari@gmail.com

+9193141 93262 (जूनेजा बाबूजी)
+919725389547 (आचार्य सुभाष जी)

ब्रह्मसृष्टियों की महिमा

जै किशन निजानन्दी, असम/नागालैण्ड

इस संसार में बड़े–बड़े ऋषि–मुनि, अवतार और तीर्थंकर हो चुके है किन्तु अक्षरातीत के अंग कहे जाने वाले ब्रह्मसृष्टियों की महिमा सर्वोपरि है। अक्षरातीत की ब्रह्मसृष्टियों की महिमा सर्वोपरि है। अक्षरातीत की ब्रह्मसृष्टियाँ परमधाम से आयी है और यह अक्षरातीत के अंगस्वरूपा अर्धांगनि कहलाती है। इनका सारा कार्य–व्यवहार नूरमयी अर्थात् पूर्णतया स्वच्छ, पारदर्शी एवं प्रेममयी होती है। इनका हृदय अक्षरातीत के नूरी इश्क से भीगा हुआ होता है। इसलिए इन ब्रह्मात्माओं का पद सबसे ऊँचा कहाँ गया है।

मेमिन बड़े मरातबे, नूर बिलंद से नाजल।
इनों काम हाल सब नूर के, अंग इस्कै के
भीगल।।कि.71/4

परमधाम से अवतरित होने वाली ब्रह्मात्माओं की प्रशंसा वेद और कतेब पक्ष के धर्मग्रन्थों में बहुत गायी गयी है। ब्रह्मसृष्टियों की महिमा के बारे में यहाँ तक कहां गया है कि इस जगत में कोई भी इन ब्रह्मसृष्टियों की सेवा करता है या महिमा गाता है, वह परब्रह्म की सेवा और महिमा के समान ही होता है। इसलिए श्री बीतक साहेब में कहा गया है कि इस संसार में मोमिनों की सेवा तथा महिमा के गायन के समान और कोई बंदगी नहीं है।

सेवा सिफत मोमिनों की, पहुँचत है सब हक।
इन समान बन्दगी, नहीं कोई बुजरक।।
बी.62/41

तारतम ज्ञान के प्रकाश में जो ब्रह्ममुनि अक्षरातीत पर अटूट श्रद्धा, समर्पण, प्रेम, विश्वास रखते हैं और धाम धनी की शोभा–श्रृंगार एवं लीला में खोये रहते है, उन ब्रह्ममुनियों का दीदार भी यदि संसार का जो जीव कर लेता है, तो उनके सौभाग्य का वर्णन इस सांसारिक जिह्वा से नहीं किया जा सकता।

और सुनत जमात की, जो बातें हक सोहोबत।
तिनको दीदार जा करें, ताकी न आवें जुबां
सिफत।। बी.62/42

ब्रह्मसृष्टियों की इतनी बड़ी गरिमा को जानकर ही उनकी महिमा का गायन शुकदेव जी ने श्रीमद्भागवत में और वेदव्यास जी ने अनेक ग्रंथों में

किया है। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवता भी अपने चित्त में इनकी चरण धूलि पाने की इच्छा रखते हैं।

इनकी सिफत सुक जी कहें, शास्त्रों वेद व्यास।
त्रिगुन अपने चित में, रज की राखें आस।।
बी.62/44

इस ब्रह्माण्ड के स्वामी कहे जाने वाले त्रिदेवा तो क्या, जब स्वयं अक्षर ब्रह्म जो अक्षर धाम में रहते हैं, जो कि अखण्ड हैं। उनके एक पल मात्र से त्रिदेवों के इस ब्रह्माण्ड जैसे अनेकों ब्रह्माण्ड उत्पन्न होकर लय को प्राप्त हो जाते हैं। जिस अक्षर ब्रह्म के एक पल में वायु तत्त्व के देवता ईश्वर, आदिनारायण तथा कारण प्रति का लय हो जाता है, वे अक्षर ब्रह्म भी इन ब्रह्मात्माओं के दर्शन पाने के लिए लालायीत रहते हैं।

अक्षर ठौर अखंड जो, जाके पल थें पैदा कई इण्ड।
सो उपजत फना हो जात है, त्रिगुन समेत ब्रह्मांड।।
ईश्वर महाविष्णु प्रकृति, पल फिरे होत है नास।
सो अक्षर इन सैयन की, करें दीदार की आस।।
बी.62/47,48

अपने लाड़ली ब्रह्मसृष्टियों की यशोंगान करने के क्षेत्र में स्वयं अक्षरातीत भी पीछे नहीं रहते हैं। क्योंकि परमधाम की रहने वाली ब्रह्मात्मायें उन्हें बहुत ही प्यारी है। अपने ब्रह्मात्माओं को तारतम ज्ञान देकर बहुत ज्ञानी बना दिए है। इनके धाम हृदय में विराजमान होकर अपनी सारी शोभा तथा न्यामतें अपने लाड़ली आत्माओं को देकर स्वयं इनकी महिमा का बखान अपने मुखारविन्द से करते है–

लाड़लियां लाहूत की, जाकी असल चौथे आसमान।
बड़ी बड़ाई इनकी, जाकी सिफत करें सुभान।।
कि.71/1

इस 28वें कलियुग में ब्रह्ममुनियों का पदार्पण के कारण ही यह संसार धन्य–धन्य कहलाया । ब्रह्मसृष्टियों के आगमन होने से अक्षरातीत को भी इस संसार में आवेश स्वरूप से आना हुआ। जिसकी आने की वाट युगों–युगों से ऋषि–मनीषीगण देख रहे थे। ब्रह्मसृष्टि के अवतरण के कारण ही परब्रह्म के हृदय से यह तारतम वाणी प्रगट हुआ, जिसके प्रकाश में आज सभी को अक्षरातीत के धाम, स्वरूप एवं लीला का ज्ञान हो रहा है। यह तारतम वाणी का प्रकाश जिसके हृदय में भी होगा, उसका अज्ञानरूपी अंधकार मिट जाएगा और वह अखण्ड सुख एवं अखण्ड मुक्ति की प्राप्ति करेगा।

यह सौभाग्य मात्र ब्रह्मसृष्टि के अवतरण के कारण ही सारे संसार वाले को मिला है। इसलिए शुकदेव जी ने राजा परीक्षित से यह बात बतायी है

कि संसार के सभी लोग (भक्त, मनीषी, योगी आदि) केवल अक्षर ब्रह्म (विभूति पाद) तक की ही भक्ति करते हैं, जबकि ये ब्रह्मसृष्टियाँ तो अक्षर ब्रह्म से भी परे साक्षात् अक्षरातीत के हृदयस्वरूपा है। अक्षरातीत के इन ब्रह्मांगनाओं को इस संसार में आ जाने से सबको अखण्ड मुक्ति मिलेगी और सभी को अखण्ड सुख प्राप्त होगा।

सुखदाई सबन को,
अखंड करन हार।
विश्व बन्दे अक्षर लो,
सुके परीक्षित सो कह्यो विचार।।
बी.2/19

अतः ब्रह्ममुनियों की महिमा इस संसार में सर्वोपरि है। परब्रह्म के समान ही ब्रह्मसृष्टियों की महिमा गायी गयी है और इन्हें ब्रह्म के समान भी कहां गया है क्योंकि ब्रह्मात्माओं के अंग–अंग में, रोम–रोम में प्रियतम अक्षरातीत रमे (बसे) होते हैं। अक्षरातीत और ब्रह्मत्माएँ एक–दूसरे में ओत–प्रोत होने के कारण ये दोनों अंगी–संगी भी कहलाते है। जिन ब्रह्मसृष्टियों के हृदय में अक्षरातीत अखण्ड रूप से विराजमान होते हैं, ऐसे ब्रह्मसृष्टियों की बन्दगी और अक्षरातीत की बन्दगी में कोई अन्तर नहीं होता अर्थात् ब्रह्मसृष्टियों की गयी सेवा, सत्कार या सम्मान अक्षरातीत की ही सेवा, सत्कार या सम्मान कहलाता है। राजजी ने हम ब्रह्मसृष्टियों की इतनी बड़ी महिमा प्रदान किए है। अब हम सुन्दरसाथ का भी कर्त्तव्य बनता है कि ध्यान के द्वारा अपने प्रियतम अक्षरातीत को अपने धाम हृदय में बसाये और तारतम वाणी के द्वारा सारी दुनियाँ को अपने प्रियतम अक्षरातीत का पहचान कराये इसी में हमारी गरिमा छिपी हुई है।

ब्रह्मसृष्टि कहीं वेद ने, ब्रह्म जैसी तदोगत।
बन्दगी इनकी या खुदाय की, नहीं कोई
तफावत।।

आवश्यक सूचना

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का **चौदहवां वार्षिकोत्सव,**
01 से 07 सितम्बर 2020 को मनाया जायेगा।

'दोपहर का सूरज' की संक्षिप्त भूमिका

अमर लाल सेठी

बाल्यकाल के संस्कार और धार्मिक साहित्य का पठन, चरित्र निर्माण में सहायक होते है। इसलिए बाल साहित्य का प्रकाशन में सतर्कता की आवश्यकता। आज लोग धर्मविहीन हो रहें, नैतिकता में गिरावट आ रही है। इसी कारण बच्चों में धार्मिक संस्कारों की भी कमी दिखाई दे रही है। बच्चों में धार्मिक प्रवृत्तियों को विकसित करके जीवन को विवेकपूर्ण दिशा देने के लिए प्रचुर मात्रा में बाल साहित्य का सृजन किया जाना चाहिए। इससे महामति श्री प्राणनाथ जी की वाणी जो सर्वधर्म का अंग है उसका विस्तार होगा। इसी उद्येश्य से दोपहर का सूरज का संक्षप्ति कर प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है कि यह संकलन, बालकों के चरित्र निर्माण में तथा आध्यात्मिक उत्थान में एक अनुपम उपहार के रूप में सहायक होगा।

उमरकोट गाँव में एक मत्तू मेहता नाम के व्यापारी रहते थे। उनकी धर्मपत्नी का नाम कुंवर बाई था। उनके घर एक सुन्दर पुत्र ने जन्म लिया, जिस का नाम देवचन्द्र रखा गया। जब वे ग्यारह साल के हुए तो उनके मन में विचार आया कि मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? मेरी आत्मा का प्रियतम कौन है? एक बार उनको पिताश्री के साथ कच्छ जाने का मौका मिला, वहाँ उन्होंने बहुत से साधू–महात्मा देखे। वापस आने के बाद उनके मन में यही चलता रहता कि मैं कैसे भी कच्छ जाऊँ और अपनी अत्मा के प्रियतम की खोज करूं।

एक दिन उनको पता चला कि कुछ बाराती कच्छ के लिए जा रहे है। देवचन्द्र जी के पास कोई सवारी न होने के कारण उन्होंने मना कर दिया, पर देवचन्द्र जी पैदल ही उनके पीछे चल पड़े। शाम का समय था। चलते–चलते रात हो गई। बाल मन होने से डरने लगे। मन में चोर, डाकूओं का भय आने लगा। अचानक एक सिपाही वेश में पठान आदमी आता दिखाई दिया। उसने पास आकर कहा बालक! अपनी तलवार मुझे दे दो फिर गठरी भी ले ली।

सिपाही वेष पठान ने देवचन्द्र जी को लेटने को कहा। उन्हें लगा कि अब यह उनके जीवन की आखरी घड़ी है। पर ये क्या! पठान ने अपना पैर उनकी बांयी टांग के मूल पर रख दिया। ऐसा ही दांयी टांग के मूल पर भी किया। इस से उनका सारा पेट दर्द ठीक हो गया, जो कि बहुत चलने और दौड़ने से उनके पेट में हो रहा था। दोनों बातें करते–करते साथ–साथ चलने लगे। थोड़ी दूरी पर जा कर श्री देवचन्द्र जी की तलवार और गठरी वापस देते हुये और अपनी पछौरी वापस लेते हुये, जो कि उन्होंने श्री देवचन्द्र जी की कमर पर बांधी थी, वहा देखों ये ही है तुम्हारे साथी। जैसे ही देवचन्द्र जी ने बारातियों की पहचान करके उनको कहना चाहा वे अन्तरध्यान हो चुके थे। की अतरात्मा पुकार उठी, आँखों से आसूं बहने लगे। इस भयानक रात में मेरी गठरी आप अपनी पीठ पर लाद कर 40 कोस तक चलने वाला उस प्राण प्रियतम के सिवा कौन हो सकता है। दिल का विश्वास कहने लगा, अगर वो हर पल मेरे साथ है तो मैं उसे जरूर ही खोज लूंगा। अब उस स्वरूप का ध्यान करके उन्होंने भोजन बनाया और भोग लगाया।

कच्छ पहुँच कर वे बहुत से मन्दिरों, मठों तथा सिद्ध योगियों के पास गये, पर कहीं भी उनके मन को शांति न मिली। वहाँ वह एक मुल्ला के पास भी गये, उसने भी शरीयत की पाँच चीजों – कलमा, रोजा, नमाज और हज पर बल दिया। उसने खुदा को निराकार और निर्गुण बताया तथा मुहम्मद साहब जी के द्वारा खुदा से बातें करने का जिक्र किया। इस पर देवचन्द्र जी ने कहा कि जब खुदा की कोई सूरत ही नहीं है तो मुहम्मद साहब ने बातें कैसे कर ली। मुल्ला कुछ भी स्पश्ट नहीं बता पाया, तो देवचन्द्र जी ने आगे की राह पकड़ी।

बहुत सारे मत–पन्थों में खोज करने के बाद वे भोजनगर आये। वहाँ उनका मिलन गोपी भाव में श्री कृष्ण जी की भक्ति करने वाले हरिदास जी से हुआ, जो कि उनके पिता मत्तू मेहता जी के भी गुरू थे। वहाँ रह कर वे बहुत प्रेम भाव से हरिदास जी की सेवा करने लगे। एक दिन खुश होकर हरिदास जी ने उन्हें दीक्षा मन्त्र देने का सोचा। श्री देवचन्द्र जी दीक्षा लेने के लिए सिर मुंडा कर हरिदास जी के सामने बैठ गये। उन्होंने पूछा तुमने पहले किसी से दीक्षा ली है तो देवचन्द्र जी ने कहा सन्यासियों से गायत्री महामंत्र की दीक्षा ली है। तब उन्होंने कहा मेरा दिया हुआ मन्त्र तभी काम करेगा, जब तुम पहले वाले दीक्षा मंत्र को किसी कागज पर लिख कर रोटी में लपेट कर वापस कर दो। देवचन्द्र जी बोले गुरूदेव जी अगर आप का दिया हुआ मंत्र ज्यादा शक्तिशाली है तो पहले वाला मंत्र खुद ही मेरे दिल से निकल जायेगा। इस बात पर हरिदास जी बहुत खुश हुये और उनको दीक्षा मंत्र दे दिया। संयोगवश जिस दिन उन्होंने सिर मुड़ा कर दीक्षा ली थी, वही दिन उनकी शादी का निश्चित हुआ था।

पिताजी को पता चला तो वे बहुत क्रोधित हुये। देवचन्द्र जी की रूचि संसार में बिल्कुल भी न थी, पर पिता की हठ के कारण उन्हें लीलबाई से विवाह करना पड़ा। वह रात को तीन घण्टे ही घर रहते बाकी सारा समय हरिदास जी की सेवा और मन्दिर की परिक्रमा में बिताते। एक दिन कुछ व्यक्ति हरिदास जी के पास एक आदमी को लेकर आये जो बिच्छु के काटने से बेहोश था। उन्होंने मंत्र पढ़ा, मूछों पर हाथ फेरा और जहर उतार दिया। सब ने उनका धन्यवाद किया। देवचन्द्र जी सब देख रहे थे। हरिदास जी ने कहा कि तुमने देखा यह मंत्र कितना असरदार है तुम भी इसे सीख लो, पर उन्होंने यह कह कर मना कर दिया कि जन्म–मरण में तो हजारों बिच्छुओं के डंक जैसा कष्ट है, जब उससे बचने का मंत्र आप मुझे दे चुके है, तो इस की क्या जरूरत है। देवचन्द्र जी हर रोज रात के तीन बजे के लगभग मंदिर की परिक्रमा के लिए जाते थे। एक दिन हरिदास जी ने उन्हें देख लिया और पूछने पर उन्होंने कहा गुरूदेव मुझे समय का कुछ अंदाजा ही नहीं रहा सो आ गया। दूसरे दिन फिर से हरिदास जी ने उनको देखा तो सोचने लगे कि इन में इतनी निष्ठा और सेवा भावना है क्यों न दो मूर्तियों में से एक बाल मुकुन्द की मूर्ति इनको दे दूं। ये घर पर ही सेवापूजा कर लेंगे, और जो मंदिर के साथ–साथ जो मेरे कमरे की भी परिक्रमा होती रहती है मैं भी इस बोझ से मुक्त हो जाऊँगा।

अरे ये क्या! सुबह वह उठे तो मूर्ति गायब थी। सब जगह ढूढ़ने पर भी मूर्ति न मिली। परिवार सहित भोजन न करने की प्रण लेकर आधी रात को जब वह इसी चिन्ता में डूबे थे कि बाल मुकुन्द जी ने साक्षात दर्शन दिया और कहा हरिदास तुम मुझे देवचन्द्र जी के यहाँ पधराने जा रहे थे, तुम्हें पता भी है वे कौन है। ब्रज लीला में श्री कृष्ण जी के साथ जिस परब्रह्म की शक्ति ने लीला की थी वे वही श्यामा जी है। मैं किसी भी कीमत पर इनसे सेवा नहीं करवा सकता इसलिए अन्तर्ध्यान हो गया था। वो और तो उन्हें मना कर देना, अगर फिर न माने तो बांके बिहारी के वस्त्रों की सेवा दे देना। श्री देवचन्द्र जी के आते ही हरिदास जी उनके चरणों में लेट गये और अपनी भूल की माफी मांगने लगे। श्री देवचन्द्र जी बोले गुरूदेव आप ऐसा क्यों कर रहे है, मैं तो आप का शिष्य हूँ। तब उन्होंने सारी घटना श्री देवचन्द्र जी को सुनाई और कहा इतने साल बीत गये मुझे यहाँ सेवा करते हुये पर कभी साक्षात दर्शन नहीं हुआ। आज आप ही की कृपा से मुझे बालमुकुन्द जी का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ हैं। दोनों ने दर्शन करके भोजन किया। श्री देवचन्द्र जी ने बांकेबिहारी के वस्त्रों की सेवा अपने घर पधराई।

एक दिन देवचन्द्र जी ध्यान कर रहे थे कि उनका ध्यान ब्रज में पहुँचा, जहाँ माता यशोदा दूध गरम कर रही थी। वे राधा के रूप में उनके पास खड़े है। माता यशोदा ने बड़े प्रेम से कहा "आओ

राधा रानी, यहां आकर भोजन करो।''

''माते! मैं कुछ जल्दी में हूँ। यह बताईये, कन्हैया कहां है? ''मैं उनसे मिलना चाहती हूँ।'' ''उस नटखट को तो तुम जानती ही हो। वह भला शन्ति से कहां रह सकता है? वन में ग्वालबालों के साथ खेल रहा होगा।'' ''मैं अभी वहीं जाना चाहती हूँ। क्योंकि मेरा मन तो उनमें ही लगा है।'' ''यह मिठाई ले लो और दोनों मिलकर खा लेना।''

श्री देवचन्द्र जी राधा रूप में ग्वाल बालों के पास पहुँच गये, और पूछते है–''श्री कृष्ण जी कहां है?'' ''कौन से श्री कृष्ण जी?'' यहां तो हर टोली में श्री कृष्ण नाम के बालक है।'' ''नन्द लाल श्री कृष्ण'' यहां तो अनेकों श्री कृष्ण है, जिनके पिता का नाम नन्द है।'' ''माता यशोदा के पुत्र श्री कृष्ण।'' कन्हैया खड़े सब देख रहे थे। मुस्करा कर बोले आओ! राधारानी मैं तो तुम्हारी ही राह देख रहा था। ''आप की प्रेमभरी छल वाली लीला समझ नहीं आती'' मैं कब से ढूंढ़–ढूंढ़ कर परेशान हूँ और आप को हँसी आती है। ''मैं तो तुम्हारे बिना पल भी नहीं रह सकता, ''तुम तो मेरी प्राणेश्वरी हो।'' दोनों प्रेम भरी बातें करने लगे। यशोदा जी के द्वारा भेजी हुई मिठाई बांटी जाने लगी अति प्रेम में भरकर देवचन्द्र जी ने जैसे ही मिठाई खाने के लिए हाथ उठाया, तो उनका ध्यान टूट गया। ध्यान में उनको प्रत्यक्ष दर्शन हो रहा था। ध्यान टूटते ही दर्शन लीला बंद हो गई। अब वे आस्था के साथ दर्शन देने वाले स्वरूप को अपनी आत्मा का प्रियतम मानकर सेवा और ध्यान में लग गये।

श्री देवचन्द्र जी और अधिक अध्यात्मिक ज्ञान पाने के लिए नवतनपुरी (जामनगर) आ गये, माता–पिता भी साथ आ गये। इन नगर में बल्लभाचार्य मत का बहुत प्रचार था। यहां श्री कृष्ण जी के मन्दिर में कान्हजी भट्ट श्री मद्भागवत की कथा करते थे। श्री देवचन्द्र जी प्रेम भाव से निष्ठाबद्ध होकर भागवत की कथा सुनने लगे। उनकी कथा में इतनी रूची और निष्ठा देखकर कान्ह जी भट्ट तब तक कथा सुनानी शुरू नहीं करते थे जब तक देवचन्द्र जी नहीं आते थे। यह सब देखकर वहां के अग्रगण्य, धनवान लोगों को ईर्ष्या होने लगी। वह कान्हजी से कहने लगे कि हमें यहां आते हुए इतने साल हो गये, आप हमारे लिए तो कभी रूके नहीं, पर देवचन्द्र क्यों आप के इतने प्यारे हो गये है, कि आप उनके आने पर ही कथा शुरू करते हो तब कान्ह जी ने कहा कि जितनी निष्ठा से वह कथा सुनते है, आप में से कोई भी नहीं सुनता। यदि मैं कोई श्लोक आगे पीछे बोल दूं तो आप लोगों को कुछ भी पता नहीं चलता, पर वे छोड़े हुए श्लोक को सुनने मेरे घर आ जाते है। एक बार तो सब चुप हो गये, पर अंदर से क्रोध अभी नहीं गया था। एकादशी के दिन उन्होंने देखा कि देवचन्द्र जी भरपेट खाना खाते है और द्वादशी को उपवास करते है। ये ही चुगली लेकर वे कान्हजी भट्ट के

पास आ गये। कान्ह जी ने कहा मुझे पूरा विश्वास है कि वे धर्म के विरूद्ध कोई काम नहीं करेंगे, पर आप लोगों की तसल्ली के लिए मैं पूछ दूंगा। इतने में देवचन्द्र जी सभा में आ गये। भट्टजी ने उनकी सारी बात कह सुनाई। उन्होंने कहा यह सच है, मैं ऐसा ही करता हूँ, क्योंकि एकादशी को हमारे यहाँ भागवत की कथा होती है, इसलिए मेरी आत्मा को आहार मिलता है, तो मैं शरीर को भी आहार देता हूँ और भरपेट भोजन करता हूँ, पर द्वादशी को भागवत चर्चा न होने के कारण, मेरी आत्मा को खुराक नहीं मिलती, और मैं शरीर को भी भोजन नहीं देता हूँ अर्थात् उपवास करता हूँ। अब सब को अपनी भूल का अहसास हुआ कि हमने इनके प्रति गलत सोचा, बल्कि ये तो महान हैं।

भागवत सुनते 14 साल बीत चुके थे। उनकी उम्र 40 वर्ष की हो चुकी थी, कि अचानक उनको बुखार आने लगा। तेज बुखार के चलते 10–12 दिन तक उन्होंने भोजन भी नहीं किया, पर बुखार कथा में बांधा नहीं डाल सका। वे नियमवद्ध होकर कथा सुनने जाते रहे। बुखार न टूटने के कारण पिताजी वैद्य को ले आये। उन्होंने दवाई देते हुये खुली हवा में जाने से मना किया। माताजी बोली कि ये कहां मानने वाले है, कथा सुनने तो अवश्य ही जायेंगे। वैद्य ने दवा वापस लेते हुये कहा मुझे अपनी चिकित्सा बदनाम नहीं करवानी। पिता जी बोले आप दवा दीजिए, हम इनको नहीं जाने देंगे। दवा काढ़े के रूप में उनको दी गई। भागवत कथा शुरू होते ही वह उठे, हाथ मुँह कपड़े से लपेटा और चल दिए। पिता जी के मना करने पर जब वह न माने तो उन्होंने दरवाजा बंद कर दिया। कुछ देर की इन्तजार के बाद जब दरवाजा न खुला तो वे वेहोश होकर जमीन पर गिर गये। इस पार माता जी कुंवरबाई उनके पिताजी को कठोर

शब्दों में डांटने लगी। दरवाजा खोल कर जब दोनों ने देखा तो आँखे बंद थी और चेहरा पीला पड़ चुका था। पिता जी कान में बोले – ''बेटे देवचन्द्र! कथा सुनने जाओ।'' देवचन्द्र जी की आँखे न खुली तो पिताजी फिर से ऊंचे स्वर में बोले, बेटे कथा सुनने जाओ, हम तुम्हे नहीं रोकेंगे। कहो तो मैं छोड़ आऊं। कुछ समय बाद उनको होश आया और वे उठकर बैठ गये। पिताजी ने फिर से कहा तुम खुशी–खुशी जाकर कथा सुनो तुम्हें कोई नहीं रोकेगा। श्री देवचन्द्र जी जी ने लाठी पकड़ी और चल दिये। 10–15 दिन के बाद एक दिन जब वह भागवत कथा सुन रहे थे तो उनको एक तेज पुन्ज (प्रकाश) दिखाई दिया, जिससे एक बहुत ही सुन्दर किशोर स्वरूप प्रगट हुआ। श्री देवचन्द्र जी मग्न होकर एकटक देखते रहे। उफ! कितना सुन्दर स्वरूप है–मुस्कराता चेहरा, घुंघराले बाल, सेंदुरिया रंग की पाग, श्वेत रंग का बागा, केसरिया रंग की इजार, आसमानी रंग की पिछौरी, नीले–पीले रंग का पटुका हृदय कमल पर आये हुये पाँच हार–एक मधुर–मीठी मुस्कराहट के साथ वह स्वरूप बोला– देवचन्द्र! क्या तुम मुझे पहचानते हो जो इस तरह

से बेसुध होकर मुझे देख रहे हो। "मैं आप को पूर्णरूप से तो नहीं पहचानता। बल्कि, इतनी ही मेरी अन्तरात्मा से आवाज आ रही है कि आप मेरे प्रियतम है।"

" तो बताओ, तुम्हारा निज घर कहाँ है।"

" मुझे तो कुछ भी नहीं मालूम।"

"तुम अपने को आज तक राधा मानते रहे, और मुझे रासबिहारी श्री कृष्ण। पर सच तो यह है कि न तुम देवचन्द्र या राधा हो और न मैं रास बिहारी श्री कृष्ण।"

यह सच है कि ब्रज और रास में मेरी ही आवेश शक्ति ने कृष्ण तन में लीला की थी। उस लीला में तुम अवश्य राधा के रूप में थी। पर सच तो यह है कि मैं अक्षर से भी परे सच्चिदानन्द अक्षरातीत श्री राज हूँ और तुम मेरी आनन्द शक्ति श्यामा हो। तुम्हारी आत्मा ने इस खेल में देवचन्द्र नामक तन धारण किया है।" "मेरे प्राणवल्लभ! यदि मैं आपकी आह्लादिनी शक्ति हूं, तो आपने मुझे इस झूठी माया में क्यों डाल रखा है? मुझे तो निज घर ले चलिये।" तुम इस खेल में अकेली नहीं तो, बल्कि वे सभी आत्माएं भी तुम्हारे साथ हैं, जो ब्रज रास में थी। ब्रज में तुम्हारे साथ 11 वर्ष तथा 52 दिन तक लीला हुई। इसके बाद निराकार से परे योगमाया के ब्रह्माण्ड में महारास की लीला हुई।" तुमने परमधाम में मुझसे माया का खेल देखने की इच्छा की थी। जिस कारण मैंने तुम्हें ब्रज और रास दिखाया था। अब इस तीसरे जागनी ब्रह्माण्ड में तुम्हें ज्ञान द्वारा जागृत होना है, तभी तुम परमधाम चल सकोंगे। परमधाम में ही तुम्हारे मूल तन हैं। वहां अनन्त प्रेम और आनन्द की लीला होती है। वहां हमारा तुम्हारा अखण्ड नूरी अद्वैत (कभी न मिटने वाला) स्वरूप है।" मैंने तुम्हे संक्षेप में सब बता दिया है। यदि कुछ और पूछना हो तो पूछो क्योंकि इस तरह से प्रत्यक्ष दर्शन तुम्हें दुबारा नहीं होंगे।

धनी! तो आप कहां रहेंगे। "

"मैं तुम्हारे धाम हृदय में विराजमान हो जाऊंगा। धाम हृदय अर्थात वह दिल जिस में परमात्मा रहते हैं। तुम्हारे धाम हृदय में निवास कर मैं सबको जागृत करूंगा। धनी! "जब आप पल पल मेरे धाम हृदय में निवास करेंगे तो मुझे किस बात की चिन्ता! अब धाम हृदय में प्रियतम के विराजमान हो जाने से उनकी ब्रह्मी अवस्था हो गयी। वे त्रिकालदर्शी हो गये। उन्हें भूत, भविष्य और वर्तमान की जानकारी हो गयी। जिस शब्दातीत परमधाम की अनुभूति उनको हो रही थी, उसका ज्ञान दूसरो को देने के लिए उनका हृदय तड़पने लगा। इसी विषय में उनकी भेट गांगजी भाई से हुई, उन्होने उनको कच्छ से दीदार तक की बातें सुनाई। गांगजी भाई उनको प्रियतम अक्षरातीत श्री राजजी के स्वरूप मानकर सपरिवार अपने घर ले गये।

क्रमशः

श्री राजजी के मुखारविन्द की शोभा

हर किषन लाल जुनेजा, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर आज दिन तक चौदह लोकों में किसी ने भी अखण्ड परमधाम तथा युगल स्वरूप की शोभा, श्रृंगार के बारे में कुछ नहीं कहा। धाम धनी स्वयं ही महामति के धाम हृदय में बैठकर इसका वर्णन करा रहे हैं तांकि अन्य ब्रह्मसृष्टियों के हृदय में यह शोभा बस जाए।

चौदह तबक की दुनी में,
किन कहया न बका हरफ।
ए हरफ कैसे केहेवहीं,
किन पाई न बका तरफ।।
सिर पाग बाँधी चतुराई सों,
हके पेंच हाथ में ले।
भाव दिल में लेय के,
सुख क्यों कहू विध ए।।
रंग लाल जरी माहें बेल कई,
कई फूल पात नकस कटाव।
कई रंग नंग जवेर झलकें,
बलि जाऊं बांधी जिन भाव।।

धामधनी अपनी आत्माओं को आनन्दित करने के लिए अपने दिल में भाव लेकर अपने अति उज्जवल और गौरवर्ण हस्तकमलों से लाल रंग की पाग जिस पर सोने की तारों से अनेक प्रकार की लताओं, फूलों और पत्तियों के चित्रों की नक्काशी की हुई है, उसे अपने सिर के ऊपर अनेक प्रकार के पेंच फिराते हुए इस प्रकार से बांधते हैं कि उसकी आकृति सारंगी बाजे की तरह शोभा ले रही है। पाग में अनेक रंगों के नग और जवाहरात झलकार कर रहे हैं।

ऊपर कलंगी लटकत, झलकत है अति जोत ।
याको नूर आसमान में, भराए रहयो उद्दोत ।।

पाग के ऊपर कलंगी लटक रही है। कलंगी में पर लगे हुए हैं। पाग में दुगदुगी झलकार कर रही है। दुगदुगी के ऊपर मानिक तथा अनेक नग जड़े हुए हैं। कलंगी, उसमें लगे पर तथा नगों जड़ित दुगदुगी इन सब की शोभा, ज्योति बहुत अधिक झलकार कर रही है। उनका नूरमयी प्रकाश आकाश में चारों ओर फैल रहा है। श्री राजजी के प्रेम भाव में डूबी रहने वाली ब्रह्मसृष्टि जब धनी के प्रेममयी भावों एवं पाग के पेंचों की शोभा को निहारती है तो उसमें इतना डूब जाती है कि उससे निकल पाना सम्भव नहीं होता।

सुन्दरता इन मुख की, शब्द न पोंहोंचे कोय ।
नूर को नूर जो नूर है, किन मुख कहूं रंग सोय ।।

श्री राजजी के मुख के अनन्त सौदर्य का वर्णन किसी भी भाषा का कोई भी शब्द समर्थ नहीं है। उस स्वरूप के मुखारविन्द के रंग की शोभा का वर्णन कैसे किया जाए।

ए उज्जवल रंग अर्स का, माहें गेहेरी लालक ले ।
मुख चौक छबि इनकी, किन बिध कहूं मैं ए ।।
तिलक सोभित रंग कंचन, असल बन्यो सुन्दर ।
चारों तरफ करकरी, सोहे लाल बिन्दी अन्दर ।।

परमधाम में विराजमान श्री राजजी के मुखारविन्द का रंग उज्जवल (सफेदी) में गहरी लालिमा लिये हुए है। उनके मुख की आकृति अति सुन्दर है। श्री राजजी के ललाट (माथे) पर कंचन रंग का बना हुआ बहुत ही सुन्दर तिलक शोभायमान हो रहा है। उसके चारों ओर छोटी–छोटी चमकती हुई बिन्दियां हैं। तिलक के अन्दर लाल रंग की बिन्दी लगी हुई है।

लवने कैसे कानों पर, तिन केसों का जो नूर ।
आसमान जिमी के बीच में, जोत भराय रही जहूर ।।

श्री राजजी के सुन्दर घुंघराले बाल कानों के आभूषणों तक आए हुए हैं। घुंघराले बाालों में सुगन्धित हिना का इत्र लगा हुआ है। उन बालों से निकलने वाली नूरमयी ज्योति धरती और आकाश के बीच में चारों ओर फैल रही है।

नैनन की मैं क्या कहूं, नूर रंग भरे तारे ।
सेत माहें लालक लिये, सोहे टेड़े अनियारे ।।

श्री राजजी के अनन्त सौन्दर्य से भरे हुए दोनों नेत्रों के तारे नूर से भरपूर हैं। दोनों नेत्रों की सफेदी में लालिमा मिली हुई है जो प्रेम की प्रगाढ़ता का परिचारक है। नेत्रों की आकृति तिरछी और उनके कोने नुकीले हैं जो सौन्दर्य का प्रतिमान हैं। श्री राज जी के नेत्र बहुत ही प्यारे लगते हैं और माधुर्यता के सागर के समान दिखाई देते हैं। इनमें आठों सागरों की छबि दिखाई पड़ती है, जिनमें उनका स्वरूप और आनन्द झलकता रहता है। उनको देखने पर एक क्षण भी अलग होने की इच्छा नहीं होती।

नासिका की मैं क्या कहूँ,
काई इनका निमूना नाहें ।
जिन देख्या सो जानहीं, वाके चुभ रहे हैड़े माहें ।।

श्री राजजी की नासिका की सुन्दरता, शोभा के वर्णन में किसी की भी उपमा नहीं दी जा सकती। नासिका की आलौकिक छबि ब्रह्मसृष्टियों के धाम हृदय में हमेशा ही बनी रहती है। प्राणवल्लभ अक्षरातीत के दोनों कानों में मोती लटक रहे हैं जिनकी उज्जवल (सफेदी) ज्योति का प्रकाश चारों ओर फैल रहा है। दोनों कानों में नूरमयी तत्व के लाल रंग के दो बाले शोभा दे रहे हैं। इनमें चार–चार मरोड़ आई हैं। इनमें लटकते हुए मोतियों और माणिक की शोभा को देखने पर आत्मा को बहुत अधिक आनन्द आता है।

प्रियतम के दोनों गालों का रंग बहुत अधिक गोरा है, उसमें गहरी लालिमा छिपी हुई है। दोनों भौहों के बीच में नासिका की सुन्दर शोभा हो रही है। माथे पर अति सुन्दर तिलक शोभायमान हो रहा है। श्री राजजी की ठुड्डी गोरे रंग की है और बहुत ही सुन्दर है। ठुड्डी और होठ के बीच का गहरा स्थान भी बहुत सुन्दर है।

कटि कोमल अति पेट पांसली, पीठ गौर सोभे सरस ।
गरदन केस पेच पाग के, छबि क्यों कहूं अंग अर्स ।।

कोमल अंग कंठ हैड़ा, खभे मछे गौर लाल ।
कोनी कांड़े कोमल देखत, आसिक बदलत हाल ।।

श्री राजजी का कमर, पंसली और पेट बहुत कोमल है। गोरे रंग की पीठ बहुत ही सुन्दर सुशोभित हो रही है। गरदन तक आए घुंघराले बालों तथा सिर के ऊपर बंधी हुई पाग की लपेटों की सुन्दरता अलौकिक है। मेरे प्राण प्रीतम अक्षरातीत का गला और हृदय (छाती) अंग बहुत कोमल है। दोनों कन्धों तथा दानों बाजुओं का रंग लालिमा लिये हुए अत्याधिक गौर वर्ण का है। कोहनी और कलाइयों की कोमलता को देखकर आत्मा उस

शोभा में डूब कर स्वयं को भुला देती है। श्री राज जी की दोनों हथेलियों में पतली रेखायें सुशोभित हो रही हैं। हथेलियों का रंग सफेदी में गहरी लालिमा लिये हुए है। यह मिश्रित रंग इस प्रकार से ओत–प्रोत है कि इसका निर्णय करना कठिन है कि उसका रंग उज्जवल है या लाल है।

नरम अंगुरिया पतली, पोहोंचे सलूकी जुदी भाए ।
रंग सलूकी पोंहोंचे हथेलियां,
किन मुख कहूं चित ल्याए ।।
नैन श्रवण मुख नासिका, मुख छबि अति सुन्दर ।
ए देखत ही आसिक अंगो, चुभ रहत हैड़े अन्दर ।।

श्री राजजी की अंगुलियां पतली व बहुत कोमल हैं। दोनों पंजों और हथेलियों के रंगों की सुन्दरता अदभुत है। दोनों नेत्रों, कानों, नासिका तथा मुख की छबि बहुत ही सुन्दर है। जब रूह इस अलौकिक शोभा को देखती है तो यह छबि उसके धाम हृदय में बस जाती है।

बीड़ी सोभित मुख मोरत, लेत तम्बोल रंग लाल ।
ए वरनन रूह तो लों करे, जो लों लगेन हैड़े भाल ।।
जानों के जोवन नौतन, अजूं चढ़ता है रंग रस ।
ऐसा कायम हमेशा, इन विध अंग अर्स ।।

श्री राजजी जब अपने मुख में पानों की बीड़ी लेकर चबाते हैं तो होंठो एवं मुख का अन्दर का हिस्सा लाल हो जाता है। रूह इस शोभा में डूब जाती है। धामधनी का स्वरूप ऐसा है कि जैसे नवयोवन की बहार आई हो और जिसके आनन्द और मस्ती में हर पल वृद्धि हो रही हो। श्री राज जी के नूरमयी अंगों की शोभा इसी प्रकार हमेशा बनी रहती है।

पूज्य सरकार श्री द्वारा ब्रह्मवाणी के खोले गये रहस्य

(सारांश रूप में)

1. श्री प्राणनाथ जी जन्म–मरण से रहित हैं।
2. श्री प्राणनाथ जी किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं हैं।
3. श्री प्राणनाथ जी अपनी आत्माओं को छोड़कर महाप्रलय तक दिव्य परमधाम नहीं जा सकते।
4. श्री प्राणनाथजी का कोई गुरु या माता–पिता नहीं है।
5. तारतम केवल मंत्र नहीं हैं, प्रियतम प्राणनाथ से मिलाने वाला सूत्र और प्रतिज्ञा है।
6. तारतम गुप्त रखने का कहीं निर्देश नहीं है, यह तो संपूर्ण ब्रह्माण्ड को आवागमन के बन्धन से मुक्त करने वाला है।
7. तारतम दो बार आया है।
8. तारतम देने का अधिकार केवल गादीपति महाराजों को नहीं है।
9. निजनाम श्री जी साहेबजी अनादि अक्षरातीत जागनी तारतम है।
10. श्री कृष्ण रूप अक्षरातीत निजधाम वासी नहीं हैं, वे कालमाया और योगमाया में हैं।
11. उत्तम पुरुष सच्चिदानंद श्री प्राणनाथ जी ही आराधने योग्य हैं।
12. हमारा धर्म हिन्दू है और सम्प्रदाय श्री निजानंद है।
13. ब्रह्म विद्या स्वरूप ब्रह्म वाणी ही देवी हैं।
14. मिथ्या जगत तथा चौदह लोकों से परे अक्षर–अक्षरातीत की पहचान कराकर ब्रह्मानंद को देने वाला ही सच्चा सद्गुरु है।
15. पतिव्रता भाव से अनन्य प्रेम लक्षणा भक्ति से ही अक्षरातीत श्री प्राणनाथजी की प्राप्ति हो सकती है। मिथ्या संसार के आग–पानी, मूर्ति पूजा और जड़ कर्म–कांडों को छोड़कर ही पर ब्रह्म परमात्मा की पहचान और अनन्य भक्ति हो सकती है।
16. पुराण और कुरान दोनों सम्माननीय साक्षी रूप शास्त्र हैं, परन्तु पूजनीय केवल कुलजम स्वरूप ब्रह्म वाणी मात्र है।
17. जागनीकर्ता केवल श्री राजजी है चूंकि वे ही श्री परमधाम में जागृत हैं। आत्माएं स्वयं ही फरामेश हैं तो जागनी कैसे कर सकती हैं।
18. हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई ये सब भाषा, संस्कृति और तनों के भेद हैं, चेतना सब की एक है।
19. तारतम वाणी के दृष्टिकोण से आत्मा और जीव अलग–अलग हैं तथा आत्मा सब में नहीं हैं। शरीर को जीव चलाता हैं, आत्मायें केवल दृष्टा होकर नश्वर संसार को देख रही हैं।
20. नहीं कोई इन सेवा समान, जो दिल सनकूल करे पहचान।
21. कयामत (आत्मा जागृति) के समय के सात विशेष निशानियों को सरलतम भाषा में सर्व साधारण को समझाना।
22. आत्मा जाग्रति और प्रियतम प्राणनाथ की पहचान के लिए तन, मन का निर्मल होना अत्यंत जरूरी है।

साभार : श्री प्राणनाथ सेवा समिति, अमृतसर

तनावमुक्त जीवन कैसे जियें?

मधुसूदन मल्होत्रा, जालन्धर

आज जिस को भी देखे, किसी न किसी कारण से तनाव से ग्रसित है। चाहे घरेलू हो या सांसारिक बहुत अधिक लोग बिना कारण तनाव को पाल रहे हैं। यदि आप तनाव से मुक्त रहना चाहते हैं तो नीचे लिखे थोड़े से विचारों को अपनाने से आप तनाव से मुक्ति पा सकते हैः

(1) जीवन की हर एक घटना किसी न किसी तरह आप को लाभ देता है। परोक्ष या अपरोक्ष रुप से होने वाले लाभ के बारे में सदैव सोचिए।

(2) यह सृष्टि एक विशााल नाटक में हम सभी अभिनेता हैं। हर एक अभिनेता अपना श्रेष्ठ अभिनय कर रहा है। इसलिए किसी के अभिनय को ले कर चिंतित न होवें।

(3) जिन परिस्थितियों को आप बदल नहीं सकते उन के बारे में सोच कर दुःखी न हो। याद रखें कि समय एक श्रेष्ठ दवाई है।

(4) जितना हो सके उतना दूसरों के सहयोगी बनने का प्रयत्न करे। दूसरों के सहायक बनने से आप अपनी चिन्ताओं को भूल जायेंगे।

(5) ईर्ष्या न करो, परन्तु ईश्वर का चिन्तन करो। ईर्ष्या करने से तो मन जलता है। परन्तु ईश्वर का चिन्तन करने से मन असीम शीतलता का अनुभव करता है।

(6) आप अपने जीवन की तुलना अन्य के जीवन के साथ कर चिन्तित न रहें। क्योंकि इस विश्व में आप एक विशिष्ट व्यक्ति हैं। इस विश्व में आप जैसा दूसरा कोई नहीं।

(7) सदैव याद रखिए, कि आप की निन्दा करने वाला आप का मित्र है। क्योंकि वह आप से बिना मूल्य लिए एक मनोचिकित्सक की भांति आप की कमियों की तरफ आप का ध्यान आकर्षित करता है।

(8) खुशी देने से ही खुशी बढ़ती है। इसलिए सभी को खुशी देने का प्रयत्न करें। कभी किसी को दुःख देने का विचार भी न करें।

(9) आप के अन्दर सूक्ष्म अहंकार भी आप के मन की स्थिति में असंतुलन निर्माण करता है। इसलिए उस सूक्ष्म अहंकार का त्याग करें। याद रखें कि आप खाली हाथ आये थे और खाली हाथ ही वापस जाएंगे।

(10) दिन में चार पांच बार विचारों के ट्रैफिक को रोकने की क्षमता पैदा करें। जिस से चिन्ताओं से मुक्ति पाने में सहायता मिलती है।?

(11) भूतकाल में की गई गलतियों का पश्चाताप न करें तथा भविष्य की चिंता न करें। वर्तमान जीवन को सफल बनाने के लिए पूरा ध्यान दीजिए। आज का ही दिन आप के हाथ में है। आप रचनात्मक कार्य करेंगे तो कल की गलतियां मिट जाएंगी और भविष्य में अवश्य लाभ होगा।

(12) आप स्वयं को दुःख पहुंचाने वाले को क्षमा कर दें तथा उसे भूल जांए।

(13) सभी समस्याओं को एक साथ सुलझाने का प्रयत्न न करें। एक समय पर एक समस्या का समाधान करें।

(14) आने वाली समस्याओं के प्रति दृष्टिकोण बदलने से आप दुःख को सुख में परिवर्तित कर सकेंगे।

(15) बदला न लो लेकिन पहले स्वयं को बदलने का प्रयत्न करें। बदला लेने की इच्छा से तो मानसिक तनाव ही बढ़ता है। स्वयं को बदलने का लक्ष्य रखने पर जीवन में प्रगति होती है।

(16) जब आप समस्याओं का सामना करते हैं तो ऐसा सोचिए कि आप के भूतकाल के कर्मों का हिसाब चुकता हो रहा है।

(17) अपनी सभी चिंताए परमात्मा को समर्पित कर दें।

(18) प्रतिदिन थोड़ा समय ईश्वर का ध्यान कर योग में लगाओ। योग के अभ्यास से मानसिक, शारीरिक परिवर्तन आता है। उस से मानसिक शारीरिक तनाव कम होता है और स्वास्थ्य में वृद्विहोती है। अन्त में स्वस्थ मन व शरीर से ही आप श्री राजजी का ध्यान कर अध्यात्मिक वृद्विकर जीवन को सफल बना सकते हैं।

कितनी गुणकारी है तुलसी?

एस. पी. आर्य

आपके आंगन में लगा छोटा सा तुलसी का पौधा, अनेक बीमारियों का इलाज करने के आश्चर्यजनक गुण लिये हुए होता है। सर्दी के मौसम में खाँसी–जुकाम होना एक आम समस्या है। इनसे बचे रहने का सबसे सरल उपाय है तुलसी की चाय। तुलसी की दस–पन्द्रह ग्राम ताजी पत्तियां लें और धोकर कुचल लें, फिर उसे एक कम पानी में डालें। उसमें पीपरामूल, सोंठ, इलायची पाउडर तथा एक चम्मच चीनी मिला लें। इस मिश्रण को उबालकर बिना छाने सुबह गर्मागर्म पीना चाहिए। इस प्रकार की चाय पीने से शरीर में चुस्ती–फुर्ती आती है और भूख बढ़ती है।

सर्दी, ज्वर, अरूचि, सुस्ती, दाह, वायु तथा पित्त संबंधी विकारों को दूर करने के लिए भी तुलसी की औषधीय रचना और अपना महत्व है। इसके लिए तुलसी का दस–पन्द्रह ग्राम ताजी धुली पत्तियों को लगभग 150 ग्राम पानी में उबाल लें। जब लगभग आधा या चौथाई पानी ही शेष रह जाए तो उसमें उतनी ही मात्रा में दूध तथा जरूरूत के अनुसार मिश्रि मिला लें, यह अनेक रोगों को तो दूर करता ही है, साथ ही क्षुधावर्धक भी होता है। इसी विधि के अनुसार काढ़ा बनाकर उसमें एक–दो इलायची को चूण और दस–पन्द्रह सुधामूली डालकर सर्दियों में पीना बहुत लाभकारी होता है। इसमें शारीरिक पुष्टता बढती है। तुलसी के पत्ते का चूर्ण बनाकर मर्तबान में रख लें। जब भी चाय बनाएं तो दस–पन्द्रह ग्राम इस चूर्ण का प्रयोग करें। यह चाय ज्वर, दमा, जुकाम, कफ तथा गले के रोगों के लिए बहुत लाभकारी है। तुलसी का काढ़ा बनाने के लिए तीन–चार काली मिर्च के साथ तुलसी की सात–आठ पत्तियों को रगड़ लें और अच्छी तरह मिलाकर एक गिलास द्रव तैयार करें इक्कीस दिनों तक सुबह लगातार खाली पेट इस काढ़े को सेवन करने से मस्तिश्क की गर्मी दूर होती है और उसे शक्ति मिलती है क्योंकि यह काढ़ा ह्रदयोत्तेजक होता है, इसलिए यह ह्रदय को पुष्ट करता है और ह्रदय संबंधी रोगों से बचाव करता है।

एसिडिटी संधिवात, मधुमेह, स्थूलता, खुजली, प्रदाह आदि अनेक बीमारियों के उपचार के लिए तुलसी की चटनी बनाई जा सकती है। इसके लिए

लगभग दस–दस ग्राम धनिया, पुदिना लें, उसमें थोड़ा सा लहसुन, अदरक, सेंधा नमक, खजूर का गुड़, अंकुरित मेथी, अंकुरित चने, अंकुरित मूंग, तिल और लगभग पांच ग्राम तुलसी के पत्ते मिलाकर महीन पीस लें और इसमें एक नीबू का रस और लगभग पन्द्रह ग्राम नारियल की छीन डालें। इस चटनी को रोटी के साथ या साग में मिलाकर खाया जा सकता है। चटनी से कैल्सियम, पौटेशियम, गधक, आयरन, प्रोटीन तथा एंजाइम आदि हमारे शरीर को प्राप्त होते हैं। एक बात ध्यान रखें कि यह चटनी दो घंटे तक ही अच्छी रहती है, अतः इसका प्रयोग सदा ताजा बनाकर ही करें। दो घंटे के बाद इसके गुण में परिवर्तन आ जाता है। इस चटनी को कभी फ्रीज में नहीं रखें।

अरिश्ट आसव बनाने के लिए 100 ग्राम बबूल की छाल को लगभग डेढ़ किलो पानी में तब तक उबालें जब तक कि पानी में एक चौथाई न हो जाए। अब इसे छानकर इसमें लगभग अस्सी ग्राम तुलसी का चूर्ण, पांच सौ ग्राम गुड़, 10 ग्राम पीपल तथा 80 ग्राम आंवले के फूल मिला दें। काली मिर्च, जायफल, दालचीनी, शीतल चीनी, नागकेसर, तमालपत्र तथा छोटी इलायची, प्रत्येक की 10–10 ग्राम मात्रा को कूट–पीसकर इसमें मिला दें। इस मिश्रण को एक डिब्बे में बंद कर लगभग एक माह के लिए रखें, इसके बाद आसव को छानकर प्रयोग करें। प्रतिदिन सुबह इसकी एक चम्मच मात्रा के सेवन से खांसी, वीर्य दोष, निर्बलता तथा भूख न लगने जैसी बीमारियां दूर हो जाती हैं। आपके आंगन में लगा तुलसी का पौधा न केवल धार्मिक महत्व होता है अपितु यह स्वास्थ्य लाभ भी देता है। किसी इमारत के ऊपरी मंजिल पर रहने वाले लोग आंगन में न सही, गमले में तो तुलसी का पौधा लगा ही सकते हैं।

सेवा

सेवा के चार प्रकार होते हैं – तन से सेवा, मन से सेवा, जीव से सेवा तथा आत्मा से सेवा। इन सबकी अलग–अलग उपयोगिता व महत्व है। आत्मिक सेवा जहाँ मारफत के धरातल पर होती है वहीं जीव से सेवा हकीकत के धरातल पर होती है। मानसिक सेवा अन्तःकरण (मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार) से होती है अर्थात् मन से वाणी मनन करना, चित्त से चिंतन करना, बुद्धि से विवेचना करना तथा अहम् भाव से स्वयं को अक्षरातीत परब्रह्म श्री राज जी की अर्द्धांगिनी मानना। शरीरिक सेवा का तात्पर्य हमारा शरीर हर पल धनी व सुन्दरसाथ की सेवा में तत्पर रहे।

प्रस्तुति : **नैन्सी**

सदस्यता फार्म

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित **''तारतम मंजरी''** हिन्दी मासिक पत्रिका के सदस्य बनें।

कार्यालय– श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, नकुड़ रोड़, सरसावा

जिला– सहारनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत 247232

मोबाईल न.– 7088120381 (कार्यालय) 8650851010,9725389547,9314193262

email- tartammanjari@gmail.com shri, prannathgyanpeeth@gmail.com

महोदय,

मैं ''तारतम मंजरी'' का वार्षिक/आजीवन शुल्क रु. ..... नकद/ मनी ऑडर/ बैंक ड्राफ्ट/ पे – इन – स्लिप ..... दिनांक .....

अंतर्गत अदा कर रहा हूँ।

अतः मुझे हर माह तारतम मंजरी निम्न पते पर भेजें।

नाम ..... पिता/पति का नाम .....

पता .....

..... राज्य ..... पिनकोड़ .....

फोन ..... व्हाट्सएप न. ..... e-mail .....

(विशेष नियम)

(1) सदस्यता शुल्कः वार्शिक 130/–, आजीवन 1200/–

(2) ड्रफ्ट ''तारतम मंजरी'' के नाम सरसावा, सहारनपुर में देय होना चाहिये।

(3) कृपया अपना नाम व पूरा पता स्पश्ट रूप से भरें।

(4) सदस्यता शुल्क ''साहित्य खाता'' (श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, ट्रस्ट) के खाता संख्या 1335000100118751@IFS CODE- PUNB0133500 (पंजाब नेशनल बैंक, सलेम्पुर(सहारनपुर)उ.प्र. में जमा करा सकते हैं।

सम्पादक

प्रेम निमंत्रणा **सेवा निमंत्रणा** **समर्पण निमंत्रणा**

मानखे देह अखण्ड फल पाइये, सो क्यों पाए के वृथा गमाइये।
ये तो अधखीन को अवसर, सो गमावत माझ निन्दर ।।

प्राणाधार प्यारे सुन्दरसाथ जी एवं धर्म–प्रेमी सज्जनों सादर प्रेम प्रणाम जी

आपको सूचित करते हुए अपार हर्ष हो रहा है कि अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की पा एवं सतगुरु महाराज रामरतन दास जी की आशीर्वाद एवं धर्म–वीर जागनी रतन सरकार श्री जगदीश चन्द्र जी की प्रेरणा से **दिनांक 29/12/2019 से 02/01/2020 तक पंच– दिवसीय आत्म–जागृति शिविर का आयोजन उत्तर पूर्वांचल श्री निजानन्द जागनी सेवा समिति एवं आत्म–जागृति महिला मण्डल द्वारा श्री प्राणनाथ जी मन्दिर, शुकलाई (असम)** में होना निश्चित किया गया है।

आप सभी सुंदरसाथ जी एवं सम्पूर्ण धर्म–प्रेमी सज्जन अधिक से अधिक संख्या में पधारकर धर्म लाभ प्राप्त करें और अपने आत्म–जागृति के पथ पर चलने की प्रयास करें।

प्रमुख–वक्ता
परम–पूज्य श्री राजन स्वामीजी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, उत्तर प्रदेश

कार्यक्रम स्थल – श्री प्राणनाथ जी मन्दिर, शुकलाई

संपर्क नंबर
लोकनाथ जी– 09365749290
वालाजी निजानंदी– 07002453850
सूरज गुरुंग जी– 09101803546
बादल रिमाल जी– 091017 73656

जो भी सुन्दरसाथ इस कार्यक्रम में भाग लेने जा रहें है उनके लिये **आवश्यक सूचना** फ्लाइट से जानें वाले सुन्दरसाथ को गुवाहटी की फ्लाइट लेनी पड़ेगी। ट्रेन से आनेवाले के लिये आसाम के Rangiya (RNY) Station तक का टिकिट करना होगा।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी!

सादर प्रणाम जी!

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी ज्ञानपीठवासियों, विद्यार्थियों, आचार्यों एवं आगुन्तक अतिथियों में निशुल्क किया जाता है। आप सभी सुन्दरसाथ एवं उदारमना दानदाताओं से श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, रहने के लिए उत्तम व्यवस्था हो, उसके लिए आधुनिक ढ़ंग से गौशाला का निर्माण कार्य होने जा रहा है, इसके लिए जो भी सज्जन एवं सुन्दरसाथ दान देना चाहें ज्ञानपीठ उनका स्वागत करता है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं, और आप आने में असमर्थ हैं तो कृपया ज्ञानपीठ के खाते पर राशि जमा करके सूचित कर सकते हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके द्वारा दिया गया दान गौवों के संवर्धन में ही लगाया जायेगा।

।।धन्यवाद।।

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र. 247232

MICR-Code - 247016005

IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य	क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	श्री कुलजम स्वरूप (मूल)	700.00	36.	बोध मंजरी (नेपाली)	15.00
2.	श्री बीतक साहेब टीका	400.00	37.	बोध मंजरी (उड़िया)	15.00
3.	श्री रास टीका	150.00	38.	शाश्वत सत्य की ओर	15.00
4.	श्री प्रकाश टीका	300.00	39.	सत्य को बाटो (नेपाली)	15.00
5.	श्री कलश टीका	225.00	40.	संसार से परमधाम की ओर	20.00
6.	श्री खटरूती टीका	80.00	41.	श्री प्राणनाथ महिमा	20.00
7.	श्री किरन्तन टीका (हिन्दी)	300.00	42.	श्री ब्रह्मवाणी चर्चा	65.00
8.	श्री किरन्तन टीका (अंग्रेजी)	350.00	43.	निजानन्द संस्कार पद्धति	15.00
9.	श्री किरन्तन टीका (नेपाली)	300.00	44.	सेवा पूजा	30.00
10.	श्री खुलासा टीका	250.00	45.	मूल स्वरूप की ओर	80.00
11.	श्री सनंध टीका (अप्रकाशित)		46.	चितवनी	5.00
12.	श्री खिलवत टीका	180.00	47.	आर्ष ज्योति	120.00
13.	श्री परिक्रमा टीका	275.00	48.	तारतम के निर्झर	70.00
14.	श्री सागर टीका	170.00	49.	तारतम पीयूषम्	70.00
15.	श्री सिनगार टीका	300.00	50.	हमारी शाश्वत सम्पदा	60.00
16.	श्री सिन्धी टीका	150.00	51.	खाद्य परिशीलन	250.00
17.	श्री मारफत सागर टीका (अप्रकाशित)		52.	विनाश का प्रर्याय मांसाहार	60.00
18.	श्री क्यामत नामा टीका (अप्रकाशित)		53.	विराट नक्शा (केलेण्डर रूप में)	50.00
19.	श्री मुखवाणी संगीत	150.00	54.	सौवं क्यामतनामा	90.00
20.	विद्वददमनी	200.00	55.	अनमोल मोती	5.00
21.	पट दर्शन	200.00	56.	सागर के मोती	10.00
22.	धाम सुषमा	60.00	57.	नित्य पाठ	5.00
23.	जागो और जगाओ	100.00	58.	ये स्वर्णिम पल	10.00
24.	दोपहर का सूरज	60.00	59.	मुख्तार हिन्द	20.00
25.	प्रेम का चाँद	65.00	60.	शब–ए–मेयराज	15.00
26.	निजानन्द योग	60.00	61.	अफलातूनी इलम	20.00
27.	हमारी रहनी	50.00	62.	बुलन्द मुकदमा	40.00
28.	ब्रह्माण्ड रहस्य	40.00	63.	झूठ ही झूठ	60.00
29.	श्री मद्भागवत यथार्थम्	30.00	64.	यथार्थ दीपिका	30.00
30.	ध्यान की पुष्पांजली	70.00	65.	प्रश्नमाला	5.00
31.	कड़वे सच	50.00	66.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
32.	तमस के पार (बड़ी)	40.00	67.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
33.	तमस के पार (छोटी)	20.00	68.	फरमान	30.00
34.	तमस के पार (पंजाबी)	40.00	69.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
35.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00	70.	सत्यांजलि	40.00

सुभाषित वचन

- विवेक, वैराग्य, अभ्यास और श्रद्धा आत्मिक साधना के मूल आधार स्तंभ है।
- जब तक नाशवान् वस्तुओं में आसक्ति या सत्यता दिखेगी, तब तक परम सत्य का बोध नहीं हो सकता है।
- कमियां निकालना छोड़िए, प्रशंसा करने की आदत डालिए। प्रशंसा और प्रोत्साहन पाकर तो चींटी भी पहाड़ लाँघ जाया करती है।
- ज्ञान का अभ्यास न करने से, भोगों में आसक्त रहने से, चरित्र के नाश से, अभिमान के कारण दूसरों का तिरस्कार करने से, देवता भी पछताते हैं। मनुष्य तो क्या?

BOOK POST

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

प्रकाशक
पू.श्री राजन स्वामी जी

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232

सम्पादक
श्री एस. पी. आर्य
भूतपूर्व आई. ए. एस.

तारतम मंजरी पत्रिका के स्वामी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा
जिला–सहारनपुर, दूरभाष–8650851010
अवतरित न होने पर कृपया इस पते पर लौटाये।
धन्यवाद

सेवा में,